Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies,
Online ISSN 2278-8808, SJIF 2021 = 7.380, www.srjis.com
PEER REVIEWED & REFEREED JOURNAL, JULY-AUGUST, 2021, VOL- 9/66

सुभद्रा कुमारी चौहान के काव्य में प्रेम का आदर्श रूप

निशा मलिक, Ph. D.

ऐसोसिएट प्रोफेसर, जानकी देवी मेमोरियल कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय

Abstract

मैंने हंसना सीखा है
मैं नहीं जानती रोना,
बरसा करता पल–पल पर
मेरे जीवन में सोना

उपर्युक्त पंक्तियाँ मात्र कविता नहीं वरन् सुभद्रा कुमारी चौहान के आन्तरिक व्यक्तित्व की, जीवन के प्रति सकारात्मक सोच की, अभिव्यक्ति है। हृदयस्थ अनुभूतियों को ज्यों का त्यों कागज पर उतार देना सुभद्रा जी की विशेषता रही है। उनका लेखन विशेष रूप से छायावादी काव्य की समानांतर विकसित काव्यधारा राष्ट्रीय सांस्कृतिक कविता से जुड़ा है। सुभद्रा जी का व्यक्तित्व बहुमुखी था। एक ओर वे राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त साहित्यकार, प्रथम महिला सत्याग्रही थीं तो दूसरी ओर वे स्त्री स्वाभिमान की प्रतिमूर्ति व ममतामयी माँ के रूप में दिखलाई देती हैं। उनका काव्य साहित्य जन–मानस को देश भक्ति के आवेग और आह्लाद से सराबोर करता है और साथ ही प्रणय व वत्सल भावानुभूतियों के स्वस्थ व मौलिक रूप को प्रकट करता है। पारिवारिक संबंधों पर कलम चलाने वाली पहली रचनाकार सुभद्रा चौहान ही हैं।

बीज शब्द : *स्वातंत्र्य, परिधि, वैयक्तिक, करुणासिक्त, विद्वेष भाव, मर्दानी, मृदुभाषिणी, सर्वमंगला, परिधि,आवरणहीन, समग्रता।*

Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com

मूल आलेख

आधुनिक हिंदी काव्य के जिन कवियों ने अपनी वाणी से जनमानस को संस्कृति, प्रेम व राष्ट्र भक्ति से आह्लादित व सराबोर कर दिया, उनमें सुश्री सुभद्राकुमारी चौहान का अन्यतम स्थान है। सुभद्रा जी के साहित्य व छायावादी साहित्य पर यदि तुलनात्मक दृष्टि से विचार करें तो छायावादी काव्य की भाव सघनता, कल्पना लोक व नितांत वैयक्तिक सुख– दुखात्मक अनुभूतियाँ सर्वसाधारण से बहुत दूर दिखलाई देती हैं। समाज, परिवार, राष्ट्रीय जीवन की परिधि से दूर वह एकांत निर्जन स्थल की तलाश करता है। इसके विपरित सुभद्रा कुमारी चौहान घर, परिवार, समाज व राष्ट्रीय परिधि में रहकर ही जीवन की सार्थकता समझ पाती हैं। मुक्तिबोध इस सन्दर्भ में कहते हैं – "सुभद्रा जी के काव्य– विषय के मूल तत्व, अपने प्रकृत रूप में परिवारिक सामाजिक राष्ट्रीय जीवन से लिये गये, जिसके द्वारा उनका रूप–निर्माण हुआ था। सुभद्रा जी इस पारिवारिक सामाजिक –राष्ट्रीय जीवन –परिधि से अधिक परिचित, निकट और उसके प्रति अधिक ईमानदार रहीं।"

वस्तुतः 'व्यक्ति स्वातंत्र्य' राष्ट्रीय सांस्कृतिक साहित्यकार की सबसे मूल्यवान विशेषता है जो उसकी रचना व चेतना को सार्थक व पूर्ण बनाती है। सुभद्रा कुमारी चौहान एक स्वतंत्र चेतना व्यक्तित्व से सम्पन्न साहित्यकार थीं। यद्यपि जिस समाज में उनकी बाल्यावस्था बीती वह समाज स्त्रियों के लिए बहुत उदार

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

नहीं था। पर्दा प्रथा, विद्यालय जाने पर रोकथाम, घर की छत पर जाना वर्जित, दरवाजे पर खड़े होने की अनुमति नहीं तथापि इन सभी श्रृंखलाओं को काटती हुई वे निर्द्वंद्व व निर्भय होकर अपनी बात कहती हैं–

" है इतना उत्साह कि डर है, हम उन्मत्त न बन जायें,
है इतना विश्वास की भय है, हम गर्विता न कहलावें,
इतना बल है प्रबल, कहीं हम अत्याचार न कर डालें
यही सोच–संकोच यही, मर्यादा पार न कर डालें।"

सुश्री सुधा चौहान विकट परिस्थिति में निर्मित उनके व्यक्तित्व के विषय में कहती हैं– "बहुत संभव है कि इतनी विपरीत परिस्थिति और इतने संघर्ष के बाद जो दिशा मिल रही थी, शायद इसी कारण वह शिक्षा केवल अक्षर ज्ञान और जोड़– घटाने, गुणा– भाग तक सीमित न रहकर संपूर्ण व्यक्तिव के निखार की शिक्षा बन गयी।... उनके बहुआयामी जीवन, जिसके कितने ही रूप थे, पत्नी, ग्रहिणी, समाज –सुधारक, लेखिका, सत्याग्रही, राजनीतिक कार्यकर्त्री, विधान सभा की सदस्या, विद्रोहिणी आदि उन अनेक स्तरों पर उनका जीवन अनुभव संपन्न होता गया और उसी के साथ मन के परिष्कार की प्रक्रिया भी चलती रही।" राष्ट्रीयता, देश – प्रेम सुभद्रा जी के जीवन के अभिन्न अंग थे। गांधी जी से वे विशेष प्रभावित थीं। उनके द्वारा चलाए गए 1919 ईण् के असहयोग आंदोलन के कारण उन्होंने 1920 में पढ़ाई छोड़ दी एवं स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय हो गईं। गाँधी जी की मृत्यु ने उनके अंतस् को झकझोर डाला। अपना समूचा जीवन उन्होंने राष्ट्रीय पराधीनता से मुक्ति में समर्पित कर दिया। अपने नन्हें शिशुओं को निस्सहाय छोड़कर स्वाधीनता हेतु जेल चले जाना कोई सहज कार्य नहीं है। इसी प्रकार के निःस्वार्थ त्यागी सच्चे देशभक्तों के बलिदानों से ही स्वतंत्रता संभव हुई है। वे समस्त स्त्री जाति का ओजस्वी वाणी में आह्वान करती हैं–

पंद्रह कोटि असहयोगिनियाँ
दहला दे ब्रह्मांड सखी
भारत लक्ष्मी लौटने को
रच दें लंका कांड सखी।

अनुनय–विनय, सुधारवादी समझौतों को बहुत परख चुके हैं, कोई परिणाम नहीं, अतः इसी नीति के विरोध में क्रांति का आह्वान करती हुई कवयित्री कहती है– "हमें तो हिंदुस्तान में बनाया हुआ और हिंदुस्तानियों के हित ही के लिए बनाया गया हो ऐसा शासन चाहिए। सच तो यह है कि हिंदुस्तान की आत्मा विदेशी सत्ता के खिलाफ अब क्रांति कर बैठी है। सुधारवादियों की मीठी– मीठी और लुभावनी दलीलों का अब उसपर कोई असर नहीं पड़ता।" उनका यह वक्तव्य सन् 42 के 'करो या मरो' नारे में परिणत देखा जा सकता है।

सुभद्रा जी विभिन्न मानवीय संबंधों को भी राष्ट्रीय परिस्थिति के भीतर देखती हैं। वह राष्ट्रीय जीवन की परिधि में ही इन जीवन संबंधों को जीने व अनुभूत करने लगती है यह उनके काव्य की सबसे

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

बड़ी ण्चाई व पराकाष्ठा है। उनका राष्ट्र– प्रेम तथा भावुकता को वहन नहीं करता, वृथा वह जीवन कर्तव्य बन कर सामने आता है। यथा–

गिरफ्तार होने वाले हैं,
आता है वारण्ट अभी।
धक् सा हुआ हृदय, मैं सहमी,
हुई विकल आशंक सभी।
किंतु सामने दीख पड़े
मुस्कुरा रहे थे खड़े–खड़े,
रुके नहीं आँखों से आंसू
सहसा टपके बड़े–बड़े।
'पगली यों ही दूर करेगी
×.....×....×.....×
तिलक, लाजपत, गांधीजी भी,
बंदी कितनी बार हुए,
जेल गये जनता ने पूजा,
संकट में अवतार हुए.....।

वस्तुतः सुभद्रा जी का जीवन राष्ट्रीय परिवेश से इतना एकतार था कि वे रिश्ते –संबंधों सभी को उसी चश्मे सें देखती हैं। 'जलियोंवाला बाग में बसंत' उनके हृदय की भावुक राष्ट्रीयता को प्रकट करती कविता है–

यहाँ कोकिला नहीं काक हैं शोर मचाते।
×.....×.....×.....×.....×
कोमल बालक मरे यहाँ गोली खा खाकर।
कलियां उनके लिए गिराना थोड़ी लाकर।
आशाओं से भरे हृदय भी छिन हुए हैं।
अपने प्रिय परिवार देश से भिन्न हुए हैं।।
यह सब करना, किंतु
बहुत धीरे से आना।
यह है शोक – स्थान
यहां मत शोर मचाना।।

जलियांवाला बाग में हुए नृशंस हत्याकांड पर लेखिका का भावुक राष्ट्र प्रेमी मन इतना करुणा सिक्त हो उठता है कि वह इस हत्या के जिम्मेदार लोगों को कहने के लिए शब्द ही नहीं जुटा पाता,

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

उनका एक–एक शब्द त्रस्त मानवता के शव पर अश्रु गिराता प्रतीत होता है। 'झांसी की रानी' रानी लक्ष्मीबाई की वीरता व स्वाधीनता संघर्ष को दर्शाती ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित रचना है। इसका वर्ण्य विषय ईस्ट इंडिया कंपनी के अंतिम गवर्नर – जनरल लार्ड कैनिंग के कार्यकाल में सन 1857 के सशस्त्र विद्रोह का चित्र प्रस्तुत करता है। आलोच्य कविता ऐसी ओजस्विनी व लयात्मक भाषा में लिखी गई है कि वह सीधे पाठकों की अंतरात्मा में प्रविष्ट होती है। अंग्रेज व्यापारी की छल– प्रपंच की नीति से लेकर रानी के जन्म भूमि पर बलिदान हो जाने की गाथा बच्चे बच्चे की जुबान पर गूंज उठी –

अनुनय विनय नहीं सुनता है, विकट फिरंगी की माया,
व्यापारी बन दया चाहता था जब यह भारत आया,
डलहौजी ने पैर पसारे अब तो पलट गयी काया,
राजाओं नव्वाबों को भी उसने पैरों ठुकराया,

रानी लक्ष्मीबाई की संक्षिप्त जीवन यात्रा को वर्णित करते हुए सुभद्रा जी ने नाना धुंधुपंत तात्या टोपे, अजीमुल्ला, अहमदशाह मौलवी, ठाकुर कुंवर सिंह आदि के वीरतापूर्ण त्याग को भी चित्रित किया है, सत्य ही सुभद्रा जी की कुटिल राजनीति की सूझबूझ को भी संकेतित करती है। रानी किस प्रकार भारतीयों की आपसी फूट का शिकार बनी, ग्वालियर के सिंधिया की भूमिका से वे भली–भांति परिचित थी–

"विजयी रानी आगे चल दी, किया ग्वालियर पर अधिकार
अंग्रेजों के मित्र सिंधिया ने छोड़ी राजधानी थी।"

वस्तुतः यह कविता लक्ष्मी बाई के जीवन की घटनाओं, तत्कालीन परिवेश, देश– दुर्दशा, आपसी विव्देष भाव, जातीय स्वाभिमान को जागृत करने का प्रयास, सब कुछ को अपने भीतर समेटे है। सुभद्रा जी का उद्देश्य रानी लक्ष्मी बाई की कहानी को घर–घर तक पहुंचाना था–

बूढ़े भारत में भी आयी
फिर से नयी जवानी थी,
दूर फिरंगी को करने की
सबने मन में ठानी थी,
बुंदेले हरबोलों के मुँह
हमने सुनी कहानी थी।
खुब लड़ी मर्दानी वह तो
झाँसी वाली रानी थी॥

इस कविता के महत्व को प्रदर्शित करती सुश्री सुधा चौहान की पंक्तियाँ उल्लेखनीय हैं – "बुंदेले हरबोलों ने तो अपने सीमित क्षेत्र में, झांसी की रानी ने अंग्रेजों से जो घमासान युद्ध किया था, उसका कड़खा गा–गा कर गांव में अलख जगाया था। सुभद्रा ने लक्ष्मीबाई की वीर गाथा को, उसके यशस्वी उत्सर्ग को अपनी संगीतमयी तरल ओजस्विनी कविता में आधुनिक युग के आल्हा के रूप में ढाल दिया।

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

उन्होंने अपनी 'झांसी की रानी' नामक कविता में लक्ष्मी बाई की स्वाधीनता की लड़ाई को, उसके सरल मानवीय जीवनवृत्त को कल– कल, छल– छल बहते हुए से छंद में बांधा है।" आधुनिक हिंदी कविता में शायद ऐसा यह एक अकेला वीर गाथा काव्य हैं या पांवड़ा है, जो लोकगीत के समान लोक– मानस का अंग बन गया है।" भदंत आनंद कौशल्यायन इस कविता के विषय में कहते हैं– "मेरी यह अभिलाषा थी कि हाथों में कड़े पहनकर और एक लकड़ी से उन कड़ों को बजाते हुए 'खूब लड़ी मर्दानी वह तो झांसी वाली रानी थी'– गाते हुए गांव गांव घूमूं वैसे ही जैसे वहाँ के लोकगीत गायक अपने गीतों को गाते हुए घूमते हैं।" वस्तुतः इस कविता में राष्ट्रीयता व देशप्रेम के स्वर ही नहीं गूंजते वरन् समूचा इतिहास बोलता है। रानी को विदाई देती कवयित्री अक्षपूर्ण श्रद्धा से नत होकर कह उठती है –

जाओ रानी याद रखेंगे
ये कृतज्ञ भारतवासी,
यह तेरा बलिदान,
जगावेगा स्वतंत्रता अविनाशी।

इतना सहज होकर राष्ट्रीय भावनाओं को वे इसीलिए लिख पाती रहीं क्योंकि वे स्वयं राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम की जलती हुई मशाल थीं, अपनी बात को सीधे सरल तरीके से उन्हें कहना आता था। देश–प्रेम व स्वतंत्रता अभियान के प्रति समर्पित कवयित्री व्यक्तिगत जीवनानुभूतियों व पारिवारिक दायित्व के प्रति भी सचेत रही हैं। उनके मन का प्राणमय आवेग उनकी अभिव्यक्तियों में छलकता है–

मैं जिधर निकल जाती हूँ
मधुमास उतर आता है
नीरस जन के जीवन में
रस घोल– घोल जाता है।

श्रृंगारिक प्रसाधनों से सुसज्जित हो कवयित्री प्रियतम के समक्ष सबसे सुंदर दिखना चाहती है–

"हे प्रसूनदल अपना वैभव बिखरा दो मेरे ण्पर,
मुझ सी मोहक और न कोई कहीं दिखाई दे भूपर।"

अपने सौंदर्य से प्रिय का मन मोह लेने की यह आदि– इच्छा कितनी सरल रूप में अभिव्यक्त हुई है। हृदयस्थ समस्त कोमल भावों से निर्मित अनूठी मृदुभाषिणी बनकर प्रिय का स्वागत करते हुए कहती हैं–

बहुत दिनों तक हुई प्रतीक्षा,
अब रुखा व्यवहार न होय
अजी बोल तो लिया करो तुम
चाहे मुझ पर प्यार न हो।

प्रणय–भाव में सराबोर प्रणयी किस तरह 'जाने को' कह दे –

तुम मुझे पूछते हो जाएं

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

मैं क्या जवाब दूं तुम्हीं कहो,
जा..... कहते रूकती है जबान
किस मुंह से तुमसे कहूं 'रहो' ?

प्रेम की अतिशय प्रगाढ़ता के क्षण अपने अहम् का परित्याग कर देती है, मनुहार करती हुई कवयित्री कहती है –

"मैं सदा रूठती ही आयी,
प्रिय मैंने तुम्हें न पहचाना
वह मान बाण– सा चुभता है,
अब देख तुम्हारा यह जाना।"

उपर्युक्त प्रेम– हृदय के उद्‌गार न तो रीतिकालीन मुग्धा नायिका के हैं और न ही छायावादी कोमलांगी प्रेयसी के, कदाचित मानवीय संबंधों के धरातल पर प्रतिष्ठित पारिवारिक ग्राहस्थिक जीवन के आदर्श क्षणों की अभिव्यक्ति है। इस संदर्भ में गजानन माधव मुक्तिबोध उचित ही कहते हैं–

"हिंदी साहित्य में कदाचित पहली बार प्रणय के मानव संबंध को उसकी उचित भूमिका प्रसंग में रखकर देखा गया है।"

मनुष्य मनुष्य के बीच के मधुर संबंध को उभारने का स्तुत्य प्रयास संभवतः मैथिली शरण गुप्त के बाद सुभद्रा जी में ही दिखलाई देता है। गुप्त जी की 'यशोधरा' सा विश्वास है उनमें जो प्रेम को पूर्णता प्रदान करता है–

"आओ चलो, कहां जाओगे,
मुझे अकेली छोड़ सखे।
बंधे हुए हो हृदय पाश में,
नहीं सकोगे तोड़ सखे।"

कभी–कभी विरहिनी बन 'सही नहीं जाती अब मुझसे यह वियोग की पीर सखी।' कहकर प्रिय से अनुनय निवेदन भी करती हैं जो प्रेम में विश्वास भरने की परम आवश्यक शर्त है। उनका यही व्यक्तिगत प्रेम विश्व प्रेम में परिणत होता दिखलाई देता है क्योंकि प्रत्येक संबंध को वे राष्ट्रीय अंदाज़ से देखती हैं–

"मैं प्रसन्न थी, पर प्रसन्नता
मेरी आज निराली थी ।
मैं न आज मैं थी यह कोई
विश्व प्रेम मतवाली थी।"

'विश्व प्रेम मतवाली' यह कवयित्री राष्ट्रीय परिस्थिति की परिधि में रहते हुए मानवीय संबंधों का जो चित्र प्रस्तुत करती है, उसमें 'भाई– बहन' का प्रेम व 'राखी बंधन' भी समाहित हो जाता है –

देखो भैया, भेज रही हूँ

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

तुमको– तुमको राखी आज

×××

हाथ कांपता, हृदय धड़कता,
है मेरी भारी आवाज़,
अब भी चौंकाता है जालियाँ
वाले का वह गोलन्दाज।"

वे प्रत्येक भाव के प्रति उदार हैं चाहे वह भाई हो, बहन हो, परिवार हो, समाज हो अथवा राष्ट्र। उनके जीवन में सभी मूल्यवान हैं, वे सभी को राष्ट्रीय कार्य के लिए प्रेरित करती हैं। वे समस्त संबंधों का आनंद अनुभव करती हुई आगे बढ़ती हैं। माँ बनने के उपरांत तो उनके आह्लाद की सीमा ही नहीं है–

मैं बचपन को बुला रही थी
बोल उठी बिटिया मेरी ।
नंदन वन–सी फूल उठी
यह छोटी सी कुटिया मेरी।

अपनी बालिका का परिचय देते हुए वे कहती हैं– यह मेरी गोदी की शोभा, सुख –सुहाग की लाली, शाही शान भिखारिन की, मतवाली मनोकामना, मेरा मंदिर, मस्जिद, काबा –काशी, पूजा–पाठ, ध्यान – जप– तप है और यही नहीं यही घट –घट वासिनी है। एक माँ के लिए उसकी संतान उसके जीवन में कौन सा स्थान रखती है इसे वे कितनी सहज भाषा में कहती हैं, सत्य ही ऐसा 'संतान परिचय' अन्यत्र दुर्लभ है। सुश्री सुधा चौहान के शब्दों में– "स्त्री का घर के अंदर, पत्नी का, ग्रहलक्ष्मी का, एक सर्वमंगला रूप भी हो सकता है, बेटी का पवित्र वात्सल्यमय प्यार भी हो सकता है, माँ का धरती जैसा क्षमाशील, अभयकारक परम उदार रूप भी हो सकता है, इस पर कवियों की कृपा– दृष्टि बहुत कम पड़ी। परंतु जीवन की समग्रता तो इन्हीं सब रूपों को लेकर चित्रित हो सकती है। सुभद्रा की रचनाओं का परिप्रेक्ष्य इस दृष्टि से अधिक व्यापक है।" सुभद्रा जी बच्चों से घिरी रहती थीं। अपने बच्चों के अलावा पास–पड़ोस के बच्चे भी उनसे जुड़े हुए थे। वे स्वयं बाल्यावस्था से ही कविता कहने लगी थी। संभवतः यही कारण रहा होगा उन्होंने बाल कविताएँ लिखीं। बच्चों के बचपन में उन्होंने अपने बचपन को जिया और चित्रित किया –

मैं भी उसके साथ खेलती
खाती हूँ, तुतलाती हूँ।
मिलकर उसके साथ स्वयं
मैं भी बच्ची बन जाती हूँ।

अपने छोटे पुत्र की मृत्यु की वेदना से विकल उनका दर्द 'पुत्र वियोग' कविता में व्यक्त हुआ है, जो हृदय को पीड़ा से भर देता है–

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

शीत न लग जाए, इस भय से नहीं गोद से जिसे उतारा।
छोड़ काम दौड़कर आई 'माँ' कहकर जिस समय पुकारा।।
थपकी दे–दे जिसे सुलाया जिसके लिये लोरियां गाई।
जिसके मुख पर जरा मलिनता देख आंख में रात बिताई।
पुत्र–मृत्यु की वेदना शब्दों में नहीं बांधी जा सकती।
"सुभद्रा के लेखन में स्त्री के यही अनेक रुप, उसके जीवन– प्रभात से लेकर जीवन –संध्या तक के विभिन्न धूप– छांही रंग जहां तहां बिखरे मिलते हैं।"

ईश्वरीय आराधना करते समय भी वे निरछल भावों की अभिव्यक्ति करती हैं। तत्कालीन समय जो निर्धन अथवा असहाय जन को पूजा आराधना का अधिकार नहीं देना चाहता था। संभवतः ईश्वर के घर ले जाने के लिए मोती माणिक्य जिनके पास नहीं थे, उनकी ओर से कैसी सादगी से भावों को प्रभु तक पहुंचाती हैं। 'ठुकरा दो या प्यार करो' कविता में–

" पूजा और पुजापा प्रभुवर।
इसी पुजारिन की समझो।
दान –दक्षिणा और निछावर
इसी भिखारिन को समझो
×-----×----×
×-----×----×
×-----×----×
चरणों पर अर्पित है, इसको
चाहो तो स्वीकार करो।"

सुभद्रा जी अपने मन की सच्ची, निश्छल भावनाओं को ऐसी सरल भाषा में अभिव्यक्त करती हैं, जो हमारी नित्य प्रति की कामकाजी भाषा है। उनके काव्य में ऐसे शब्द खोजने पर भी नहीं मिलेंगे जो व्याख्या सापेक्ष हों, कठिन व क्लिष्ट हो। सहज अनुभूति सहजता के साथ प्रस्तुत होती चलती है–

"दिल में एक चुंभन सी थी
यह दुनिया अलबेली थी
मन में एक पहेली थी
मैं सबके बीच अकेली थी।"

ये कविताएं भावुक हृदय पाठक को भाती हैं। अपनी बात को घुमा फिराकर अलंकृत करने का प्रयास यहां नहीं है। सुधा चौहान के शब्दों में कहें तो– "मन के भावों को उनके रूप रस, गंध, उनकी गूंज– अनुगूंज के साथ उनकी समग्रता में प्रकट कर देना, भाषा के लिए, शब्दों के लिए, सबसे बड़ी चुनौती है। किसी किशोरी की मनः स्थिति को सुभद्रा की एक पंक्ति – "मैं सबके बीच अकेली थी" कितने

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

प्रकार की अर्थ संभावनाओं को प्रकट करती है और है यह केवल एक आम बोलचाल की भाषा का छोटा सा वाक्य।" उनकी समस्त कविताएं इसी सहज अभिव्यक्ति के गुण से संपन्न हैं, अपनी सादगी में अनेक अर्थों को खोलने में सक्षम है। अपनी सरल भाषा में वे कभी राष्ट्रीय सेविका, कभी पत्नी, कभी माँ, कभी बहिन बनकर बोलती हैं और इसके साथ ही वे हिंदी भाषा का आदर्श भी बतलाती हैं –

"असहयोग पर मिट जाना,
यह जीवन तेरा होगा,
हम होंगे स्वाधीन, विश्व का,
वैभव धन तेरा होगा।
तू होगी व्यवहार देश के
बिछड़े हृदय मिलाने में
तू होगी अधिकार देश भर
को स्वातंत्र्य दिलाने में।"

गजानन माधव मुक्तिबोध उनकी सरल सहज भाषा में कही कविता के विषय में कहते हैं– "यह निःसंदेह और निःसंकोच कहा जा सकता है कि सुभद्रा जी के साहित्य में अपने युग के मूल उद्वेग, उसके भिन्न भिन्न रूप, अपनी आवरणहीन प्रकृत शैली में प्रकट हुए हैं।" वस्तुतः उनका साहित्य अपनी भाव–पद्धति व शैलीगत विशेषताओं के कारण अपना विशिष्ट महत्व रखता है।

इस प्रकार सुभद्रा कुमारी चौहान जी का साहित्य भावों की गहराई व सरलता लिए हुए है। "उनका प्रेम, उनका आनंद, उनका उल्लास, उनका नेराश्य, उनका वीरत्व, उनकी देशभक्ति सब अपने चरम उत्कर्ष पर पहुंचे हुए मिलते हैं।" सुभद्रा जी निरंतर युवा वर्ग में उत्साह का संचार करती रहीं। महिलाओं के कल्याण तथा अधिकारों के लिए सदैव त्याग, प्रेम, अधिकार और समाज की रूढ़ियों पर आधारित रचनाएँ उन्होंने लिखीं। उनके विद्रोही तेवर पर रामानुजनलाल श्रीवास्तव ने उचित ही कहां है– "जानते हैं सब तुम्हें, तुम उग्र हो, उद्दण्डिका हो। आग हो, तूफान हो, भूचाल हो, रण–चंडिका हो।"

संदर्भ ग्रंथ सूची

सुभद्रा कुमारी चौहान, सुधा चौहान, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1981।

सुभद्रा कुमारी चौहान ग्रंथावली, संकलन व संपादक : रूपा गुप्ता, भाग 1 और भाग 2, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2015, ISBN– 978–93–83513–69–7

सुभद्रा जी की सफलता का रहस्य (लेख) गजानन माधव मुक्तिबोध, आधुनिक काव्य, संपादक : सुधीर प्रताप सिंह, नटराज प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2014, ISBN– 978–93–81350–70–6

हिंदी साहित्य का इतिहास, संपादक : डॉण नगेंद्र, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, प्रथम संस्करण – 1973, ISBN – 81–7198–036–8

सुभद्रा कुमारी चौहान (लेख) विश्वंभर नाथ उपाध्याय, आधुनिक काव्य, संपादक : सुधीर प्रताप सिंह, नटराज प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2014, ISBN– 978–93–81350–70–6

सुभद्रा जी की कविताएं – अनोखा दान, झांसी की रानी, जलियांवाला बाग में बसंत, ठुकरा दो या प्यार करो, बालिका का परिचय, भैया कृष्ण, मेरा नया बचपन, राखी की चुनौती, विदा, वीरों का कैसा हो बसंत, तुम पूछते हो।

Copyright © 2021, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies